Awl

'भाषा समाज विज्ञान'

कहना न होगा कि भाषा ही मनु
को सामाजिक जीवन की कल्पना को सम्भव बना
है। आचार्य दण्डी के शब्दों में तो —
'वाचामेव प्रसादेन लोकयात्रा प्रवर्तते'
इसमें अत्युक्ति नहीं कि
भाषा अथवा सामाजिक वस्तु है। डॉ० देवेन्द्र नाथ
शर्मा के अनुसार तो "भाषा समाज की, समाज
के लिए और समाज द्वारा निर्मित होती है।" तभी
डॉ० रामविलास शर्मा को स्वीकार करना पड़ा कि
भाषा समाज की सम्पत्ति है। उनके शब्द हैं —

"वर्ग संघर्ष एवं वर्गप्रभुत्व के चंगुल से यह
मुक्त नहीं रह पाती। सामन्ती, मजदूरों,
व्यापारियों और विद्वानों के संघर्ष, उत्थान
पतन और लेन-देन आदि भाषा को करवट लेने
के लिए विवश करते हैं।"

पर यह भी असत्य नहीं कि
भाषाविद् प्रारम्भ से ही भाषा का अध्ययन समाज
के सन्दर्भ में करते आए हैं। सस्यूर ने भाषा-सम्ब
अपनी अवधारणा में भाषा के दो आयाम माने हैं —
'लांग', 'परोल'। 'लांग' भाषा का वह रूप है जो हर
बोलने वाले के मस्तिष्क में होता है; इसे 'भाषा-
व्यवस्था' कहा जाता है। दूसरी ओर 'परोल' भाषा
का प्रयुक्त रूप है। इसे 'प्रयुक्त भाषा' कहा जाता
है। भाषा व्यवस्था हर व्यक्ति के मस्तिष्क में एक
सी होती है, इसलिए भाषा व्यवस्था समरूपी होती
है, किन्तु 'प्रयुक्त भाषा' एकरूप या समरूप नहीं
हो सकती। वह अलग-अलग सामाजिक सन्दर्भों में
अलग-अलग व्यक्तियों द्वारा प्रयुक्त होने के कारण
अलग-अलग प्रकार की या विषमरूपी होती है।
प्रयुक्त भाषा को भाषा का एक रूप मानते हुए

भी सस्यूर इसे बहुत महत्त्व नहीं देते। उनके अनुसार आधा विज्ञान का लक्ष्य समरूपी 'भाषा व्यवस्था' का अध्ययन ही है, 'प्रयुक्त भाषा' या वाक् तो गौण या सांयोगिक है। विषमरूपी वाक् की भूमिका तो केवल समरूपी 'भाषा-व्यवस्था को व्यंजित करने तक ही सीमित है।

सस्यूर के 'लांग' एवं 'परोल' के समानान्तर ही चॉम्स्की की 'भाषिक क्षमता' और भाषिक व्यवहार की संकल्पनाएँ हैं। 'भाषिक क्षमता' ~~भाषा व्यवस्था का अनुरूप~~ के की सत्ता मानसिक एवं भाषिक व्यवहार की सत्ता भौतिक होती है। सस्यूर की तरह चॉम्स्की भी 'भाषिक क्षमता' को ही भाषा विज्ञान के अध्ययन का मुख्य केन्द्र मानते हैं। उनके अनुसार 'भाषिक व्यवहार' तो 'भाषिक क्षमता' तक पहुँचने का केवल एक माध्यम या साधन मात्र है।

किन्तु पिछले कुछ वर्षों में भाषा विज्ञान में ऐसी विचारधारा उभरी है जो यह मानती है कि भाषा की प्रकृति विषमरूपी है, समरूपी नहीं। भाषा के विषमरूपी होने के सबसे बड़े प्रमाण भाषा-भेद और भाषिक विकल्पन होते हैं। भाषिक विकल्पन उन भाषिक इकाइयों या तत्वों को कहते हैं जो अलग अलग सामाजिक सन्दर्भों में अलग-अलग रूप में आते हैं। यथा, 'समय' शब्द के लिए हिन्दी भाषी समुदाय में निम्नलिखित विकल्पनों का प्रयोग होता है ——

(क) क्या वक्त हुआ है?
(ख) क्या समय हुआ है?
(ग) क्या टाइम हुआ है?
(घ) कितने बजे हैं?
(ङ) कितना बजा है?

कहना न होगा कि भाषा समाजविज्ञान के उद्भव और विकास के पूर्व वाक् या भाषिक व्यवहार की विषमरूपता को यादृच्छिक और अव्यवस्थित कहा जाता रहा है और इसी आधार पर वर्णनात्मक और संरचनात्मक भाषा विज्ञान भाषिक व्यवहार को गौण मानता रहा है। वस्तुतः वर्णनात्मक भाषा विज्ञान को भाषिक व्यवहार में अगर एकरूपता और व्यवस्था नहीं दिखाई दी तो सिर्फ इसलिए कि इसने भाषा को उन सन्दर्भों से काटकर देखा जो सन्दर्भ भाषा में विविधता और विकल्पन, तथा इनके फलस्वरूप, विषमरूपता लाते हैं। भाषिक विकल्पनों को जब हम समाज के सन्दर्भ में रखकर देखते हैं तो भाषा की विषमरूपता भी सुव्यवस्थित एव नियमबद्ध दिखाई देती है।

समाजभाषाविज्ञान : अवधारणाएँ

समाजभाषा विज्ञान को माननेवाले भाषाविदों ने एकजुट होकर भाषा सम्बन्धी कुछ बुनियादी अवधारणाओं का विरोध और खंडन किया था किंतु फिर भी 'समाजभाषाविज्ञान' को लेकर ये भाषावि एकमत नहीं रहे हैं। इस सन्दर्भ में तीन मत आते हैं:—

(1) <u>भाषा का सामाजिक पक्ष</u>— इस विचारधारा के प्रवर्तक जे० फिशमैन और डेलहाइम्स हैं। इनके अनुसार भाषा और समाज में निरन्तर घात-प्रतिघात और क्रिया-प्रतिक्रिया होती रहती है जिससे समाज और भाषा दोनों ही एक दूसरे से प्रभावित होते रहते हैं। यही कारण है कि कौन, किससे, कब और कहाँ बोलता है— इन सामाजिक नियमों का ज्ञान होना आवश्यक है। यह विचारधारा यह मानती

मानती है कि भाषा में केवल आर्थिक संरचना ही नहीं, सामाजिक संरचना भी समाहित होती है। इसकी परिधि में वे सभी विषय आते हैं जैसे भाषा नियोजन, आधुनिकीकरण, मानकीकरण, जो भाषा या भाषा के प्रयोग से सम्बद्ध हैं। इसलिए इस विचारधारा के अनुसार, समाजभाषाविज्ञान का सम्बन्ध भाषाविज्ञान के अनुप्रयुक्त पक्ष से है।

② समाजो-मुख भाषाविज्ञान: गम्पर्ज और फर्गूसन इस दृष्टिकोण के व्याख्याता हैं। इस दृष्टिकोण के अनुसार सामाजिक विकल्पन या सन्दर्भ तथा आर्थिक विकल्पन या सन्दर्भ दो अलग-अलग चीजें हैं और चूँकि समाज ही भाषा को बनाता-सँवारता है, इसलिए आर्थिक विकल्पन सामाजिक विकल्पनों पर आधारित होते हैं। आर्थिक संरचना पर सामाजिक नियंत्रण इतना सशक्त है कि इस नियंत्रण तथा आर्थिक तथ्यों और सामाजिक तथ्यों के इस अंतःसंबंध को को आसानी से नज़रअंदाज नहीं किया जा सकता। उदाहरण के लिए अरोपीय परिवार की बहुत सी भाषाओं में मध्यमपुरुष सर्वनाम का प्रयोग सामाजि विकल्पनों द्वारा नियंत्रित है। हि-दी में भी यही स्थि है। यथा, तू, तुम, आप का प्रयोग श्रोता-वक्ता की सम में स्थिति और सन्दर्भ पर निर्भर करेगा।

③ समाजभाषाविज्ञान वास्तविक भाषा विज्ञान - लेबॉव द्वारा प्रस्तावित यह दृष्टिकोण सैद्धान्तिक भाषाविज्ञान के लिए सबसे बड़ी चुनौती के रूप में सामने आया। ~~xxxxxx~~ पिछले दृष्टिकोण ने सामाजिक सन्दर्भ पर बल देते हुए भी आर्थिक सन्द की सत्ता को नकारा नहीं था। किंतु यह दृष्टिकोण यह मानता है कि भाषा और समाज एक-दूसरे में इस प्र मिले हुए हैं कि दोनों को अलग करके नहीं देखा ज

सकता। दूसरे शब्दों में बिना सामाजिक सन्दर्भ
के आत्मा का अध्ययन नहीं हो सकता। अतः
सम्पूर्ण आत्मा विज्ञान ही समाजआत्मा विज्ञान है तथा
समाज के सन्दर्भ में किया गया आत्मा का
अध्ययन ही वास्तविक आत्मा विज्ञान है।